द्वितीय सेमेस्टर (एमए) हिन्दी

संस्कृत साहित्य का इतिहास

PAPER CC – 7

संस्कृत नाटक के विकाश में भास का योगदान

प्राप्त रूपककारों में भास ऐसे रूपककार हैं जिनकी कृति और लोकप्रियता का विस्तार कालिदास से पूर्व ही हो चुका था, किन्तु उनकी रचना 20वीं शती के आरंभिक दशकों में (1912) टी० गणपति शास्त्री को त्रावणकोर में 13 नाटकों के रूप में उपलब्ध हुई। इन्हें भास–नाटक–चक्र कहा जाता है। भास के समय का अनुमान करना कठिन है। कुछ विद्वान उन्हें दूसरी–तीसरी शती का तो कुछ ई०पू० 5वीं शती का सिद्ध करते हैं। भास के रूपकों का वर्णन इतिवृत के मूल स्त्रोत के अनुसार निम्नांकित हैं :

1. रामायण रूपक : 'प्रतिमा' और 'अभिषेक'
2. महाभारत रूपक : 'बालचरित्र', 'पंचरात्र', 'मध्यमव्योयोग', 'दूत–वाक्य', 'दूत–घटोत्कच', 'कर्णधार' और 'उरूभंग'
3. उदयन रूपक : "स्वप्नवासवदत्त", "प्रतिज्ञायौगंधरायण"
4. कल्पित रूपक : 'अविमारक' तथा 'दरिद्र चारूदत'

इनमें "स्वप्नवासवदत्त", "प्रतिज्ञायौगंधरायण", "बालचरित", "पंचरात्र", "प्रतिमा", "अभिषेक" अविमारक और "दरिद्रचारूदत" नाटक की कोटि में आते हैं शेष रूपक एकांकी है।

भास ने कथावस्तु प्रायः इतिहास से संकलित की फिर भी उन्होनें अपनी नवोन्मेषणी प्रतिमा द्वारा इतिहास को नया मोड़ देकर प्राचीन कथावस्तु में नवीनता का पुट ला दिया है। श्रव्य कथावस्तु को दृश्य कथावस्तु में रूपांतरित कर दिया है। प्रख्यात, उत्पाद्य एवं मिश्र इन तीन प्रकार के इतिवृतों में से भास ने उत्पाद्य और मिश्र कोटि के इतिवृत ही अपनाए हैं। राम एवं कृष्ण कथा के घर–घर में प्रचार के बावजूद कल्पना के पूट द्वारा इनसे संबद्ध वृत्तों को मिश्र की कोटि में ला दिया है। "पंचरात्र", "मध्यम व्यायोग", "दूत–घटोत्कच" ये तीन पूर्णतया उत्पाद्य है। यद्यपि इनके पात्र महाभारत से आते हैं। शेष सभी नाटकों में मौलिक संयोजनों अथवा रोपणों द्वारा वृत्तों को सर्वथा प्रख्यात ही रहने दिया है।

वृतोद्घाटन में भी भास की नाट्यकला का उत्कर्ष प्रतिपद दिखाई पड़ता है। वृतोद्घाटन एवं वृत–कल्पना की रूचिरता के कारण सुपरिचित चरित्र भी जैसे–भीष्म, द्रोण, कर्ण, अर्जुन आदि भास के नाटकों में एक नया जामा पहनकर सामने आते हैं।

वृत या वस्तु के बाद नाटक में नायकत्प का महत्व है। भास के सभी नेता (चरित्र) उनकी चित्रण कला की अनोखी रीति में पड़कर हृदय

पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। पात्र चाहे गौण हो या प्रधान नाटककार का ध्यान दोनों पर एक जैसा ही टिका रहता है।

रस परिपाक की दृष्टि से भास एक परिनिष्ठित नाटककार प्रमाणित होते हैं। सभी रसों के परिपाक में उनकी कला अकुंठित है। भास ने लोक चित्र और अपनी नाटकीय प्रतिमा दोनों के सामंजस्य विधान द्वारा अपने नाटकों की उत्थानिका बाँधी है। उन्होनें नाट्य–शास्त्र के सिद्धांतों के निदर्शन की परवाह नहीं की है इसलिए यत्र–तत्र शास्त्रीय सिद्धांतों का उल्लंघटन पाया जाता है किन्तु विस्मय यह है कि इसके बावजूद नाट्य रस की निष्पति में बाधा नहीं पड़ती और वृत का फैलाव और विस्तार ऐसे चलता है जैसे वेगवान सरिता का सुनियंत्रित प्रवाह। 'उरूभंग' में नायक के रूप में दुर्योधन का करूण अवसान दिखाकर भास ने एक सच्चे दुःखांत नाटक की परंपरा भारत में डाल दी है यद्यपि वह आगे विकसित नहीं हो सकी।

नाटकीय घटना संस्थान और नाटकीय शैली के विकास में भी भास अपनी तुलना आप है। प्रत्येक नाटक की घटनाएँ तेजी से कदम बढ़ाती है। चाल की इस त्वरा में अनेक घटनाओं की नवीनता देखते ही बनती है। भास के नाटक आंगिक, वाचिक और सात्विक तीनों प्रकार के अभिनय के योग्य है। भास की भाषा घटनोद्घाटन के अनुरूप है। वे प्रमुखतः नाटककार हैं कवि नहीं। रंगमंच और प्रेक्षकों की मनोवृति को वे

भली–भाँति परख चुके हैं। फलतः उनकी भाषा प्रतिपद ऋजु एवं सरल रहती है। उसमें श्लेषों के लच्छे नहीं होते और न हीं अलंकारों का व्यर्थ प्रदर्शन। इस तरह घटनोन्मिलन की स्वभाविकता, भाषा का स्वारस्य, चरित्र–चित्रण की सजीवता, अभिनय की कुशलता, विभिन्न रसों की यथोचित परिनिष्पति नाटक की इन सभी बातों में भास आज भी अद्वितीय बने हुए हैं।

भास के नाटक संस्कृत नाट्य रूपक के उस स्वस्थ युग के सूचक हैं जब रंगमंच, नाटक और नाट्यकार एक–दूसरे के परिपोषक और परिपूरक थे।

प्रस्तुतकर्ता
आयुषी रॉय
अतिथि शिक्षक
हिन्दी विभाग,
पटना विश्वविद्यालय, पटना
E-mail Id :
ausheeroy.roy@gmail.com